शबे शहादत

सैय्यिदुल उलमा के ख़ुतबे (3)

सय्य्यदुल उलमा ताबा सराह की यह तक़रीर ऑल इण्डिया रेडियो स्टेशन लखनऊ से दस मुहर्रम 1362हि० में प्रसारित हुई।

रात अन्धेरी होती है मगर इन्सानियत की आँखों में जैसा अन्धेरा दसवीं मुहर्रम की रात था वैसा कभी नहीं हुआ, जब कर्बला में नाम के मुसलमान पैग़म्बरे इस्लामस० का घर उजाड़ने की तैयारियाँ कर रहे थे।

शायद कोई मेरी लफ़्ज़ों का मज़ाक़ उड़ाए यह सोच कर कि 72 भूखे प्यासे लोगों से 30 हज़ार की फौज को लड़ने के लिए तैयारी की क्या ज़रूरत है? मगर नहीं ऐसा नहीं है। आपको मालूम होगा कि इससे पहले जब कूफ़ा के लोगों के बहुत से ख़त इमाम हुसैनअ० के पास पहुँचे और इसरार हद से बढ़ा तो आप ने अपने चचाज़ाद भाई को जिनका नाम मुस्लिम था अपना नुमाइन्दा बनाकर कूफ़े भेज दिया जिनके मुक़ाबले के लिए यज़ीद ने इब्ने ज़ियाद को ख़ास तौर पर कूफ़े का गवर्नर बनाया। इस वाक़िए की तफ़सीर मन्ज़ूर नहीं है मगर तारीख़ का यह वाक़िआ यादगार है कि जिस वक़्त एक अकेले मुस्लिम की गिरफ़्तारी के लिए इब्ने ज़ियाद ने थोड़ी सी फ़ौज भेजी तो पहली बार इस फ़ौज ने शिकस्त खाई और मुहम्मद बिन अश्अस ने जो इस फौज का अफ़सर था इब्ने ज़ियाद के पास मदद की दरख़्वास्त भेजी, इस पर इब्ने ज़ियाद ने मज़ाकिया अन्दाज़ में कहलवाया कि एक आदमी के मुक़ाबले में इतने लोग काफ़ी नहीं हुए जो और मदद माँगी है। इब्ने अश्अस ने जवाब दिया कि क्या आप समझते हैं कि आपने मुझे कूफ़े के किसी बनिये या कबड़िये को गिरफ़्तार करने भेजा है? आपको मालूम होना चाहिए कि यह बनी हाशिम की खिंची हुई तलवारों में से एक है फिर जब एक अकेले मुस्लिम ने कूफ़े में अपनी ख़ानदानी बहादरी का लोहा मनवा लिया तो कर्बला में दसवीं मुहर्रम को तो बनी हाशिम के कम से कम सत्तरह अटठारह शेर मौजूद थे जिनमें से कुछ बच्चे सही मगर अब्बासअ० और अली अकबरअ० ऐसे जवान भी थे और ख़ुद रसूलस० की बहादरी के वारिस हुसैनअ० मौजूद थे और उनके साथ सौ डेढ़ सौ अरब के मुजाहिद जिनमें से बहुत से लोगों की बहादरी इस्लाम की तारीख़ में नुमायाँ थी इनके मुक़ाबले के लिए शाम की फ़ौज कोई आसान बात नहीं समझती थी और कोई कमज़ोरी और ईमान व यक़ीन से महरूमी ही बड़ी कमज़ोरी थी जो दिल के साथ क़दम को भी डगमगाने के लिए काफ़ी थी और इसका असर देखा जा चुका था मदीने में भी जब वलीद इब्ने उक़्बा यज़ीद के इस हुक्म को पूरा करने से आजिज़ रहा कि हुसैनअ० से बैअत ले या उनका सर काटकर शाम की तरफ भेजे। और मक्का में जबकि अम्रो इब्ने सईद इब्ने आस की हुकूमत हुसैनअ० को अपनी तरफ से गिरफ़्तारी के डर से बचाकर निकालने से न रोक सकी और कूफ़ा में भी जब कि नोमान इब्ने बशीर ने इमाम हुसैनअ० के नुमाइन्दे मुस्लिम बिन अक़ील को अटठारह हज़ार कूफ़ियों से बैअत लेने के लिए आज़ाद रखा और पहले ही दिन गिरफ़्तार नहीं किया। यह शायरी नहीं बल्कि तारीख़ी हक़ीक़त है कि यज़ीद को हुसैनअ० के मुक़ाबले में अपने मक़सद को पूरा करने के लिए आदमी न मिलते थे तो उन पर भरोसा मुश्किल मालूम होता था।

आज भी हर धर्म का आदमी इस का अन्दाज़ा कर सकता है कि अगर कोई सरकार उनकी किसी इबादतगाह को गिराना किसी मक़सद से ज़रूरी समझती हो तो क्या उस मज़हब के लोग इसके लिए आसानी से तैयार हो

सकते हैं? क्या मस्जिद को ढाने के लिए मुसलमानों पर और मंदिर गिराने के लिए हिन्दुओं पर भरोसा किया जा सकेगा? फिर रसूल[स०] का प्यारा नवासा और मुसलमानों की तलवारें उसका ख़ून बहाएं!

ख़ुद उमरे साद का दिल हुसैन[अ०] की जंग से घबरा रहा था और अगर शिम्र नवीं मुहर्रम को इब्ने ज़ियाद का फ़रमान लेकर आ जाता और उमरे साद को यक़ीनी तौर पर अपने मन्सब और इज़्ज़त बल्कि जान और माल का भी ख़तरा महसूस न होता तो वह अब भी हज़रत इमाम हुसैन[अ०] से मुक़ाबले के लिए तैयार न होता। उसकी फ़ौज में हज़ारों आदमी ऐसे थे जो सिर्फ़ रुपये पैसे की लालच से ही इस बड़े क़दम के लिए तैयार हुए थे मगर वह हुसैन[अ०] की बड़ाई और सच्चाई को इस तरह महसूस कर रहे थे जैसे हम दोपहर को सूरज की रौशनी महसूस करते हैं यक़ीनन इस बड़े तारीख़ी इक़दाम के लिए उस फौज को बड़ी तैयारी की ज़रूरत थी। इधर हज़रत इमाम हुसैन[अ०] अपने मक़सद को पूरा करने की तैयारी कर रहे थे और तैयारी करना न होती तो इस एक रात की मोहलत माँग कर ली न होती मगर यह तैयारी अलग थी, कोई तारीख़ नहीं बतलाती कि इस रात को हज़रत इमाम हुसैन[अ०] ने कुछ हथियार जुटाए हों, लड़ाई के मौक़े के लिए कमीनगाह ढूँढी हो या जंग का नक़्शा तैयार करके अपने साथियों को मुक़ाबले की तरकीबें बताई हों और कुछ हिदायतें दी हों। हरगिज़ नहीं यह भी नहीं मालूम होता कि आपने अपने बाद के लोगों को कुछ वसीयतें की हों। अपने अपने घर वालों को आइन्दा आने वाले इम्तिहानों के लिए तैयार किया हो जो आपके बाद उन्हें बर्दाश्त करना होंगे ऐसा भी नहीं है।

फिर आख़िर आपने इस रात की मोहलत माँग कर क्यों हासिल की? इसका एक जवाब तो वह है जो आपने ख़ुद फ़रमाया था कि मैं चाहता हूँ अपने ख़ालिक़ की इबादत एक रात और कर लूँ, और ऐसा हुआ भी कि रात का बड़ा हिस्सा आपने और आपके साथियों ने तस्बीह व तहलील और इबादत में लगाया और इस रात के सन्नाटे में उन मुजाहिदीन की क़ुर्आन की तिलावत और दुआओं की आवाज़ इस तरह गूँज रही थी जैसे मधुमक्खी के छत्ते से आवाज़ आती है।

इसके अलावा आपने इस रात को जो काम किये उनकी फ़ेहरिस्त यह है:-

(पहले) अपनी ज़िन्दगी तक औरतों के पर्दे की हिफ़ाज़त। आपको अपने सामने की जमाअत के इस्लाम और शराफ़त की हक़ीक़त मालूम थी। वह जानते थे कि यह ऐसे नीच हैं कि इन्हें अरब की क़ौमी हमिय्यत व ग़ैरत के आम उसूल का भी कोई पास न होगा। कहीं ऐसा न हो कि मुक़ाबले के बीच यह लोग पीछे की तरफ़ से ख़ेमों पर हमला कर दें इस ख़याल से आपने एक गहरी ख़न्दक़ ख़ेमों के पीछे खुदवा दी और उसमें आग जला दी ताकि मुक़ाबला एक ही तरफ से हो और घिर जाने का भी डर न हो और ख़ेमों पर हमले का भी ख़तरा दूर हो।

(दूसरे) बात यह थी कि आपने अपने तमाम साथियों को इकटठा किया और मौक़े की नज़ाकत को सामने रखते हुए आप ख़याल कर सकते हैं कि हज़रत इमाम हुसैन[अ०] कोई जोश दिलाने वाली तक़रीर करेंगे और अपने साथियों को कल के मुक़ाबले में जमे रहने की तलक़ीन करेंगे या इस जंगी कोंसिल में कल की जंग के लिए कुछ तजावीज़ पर ग़ौर करेंगे और सिपाहियों से मश्वरा लेंगे मगर नहीं ऐसा नहीं हुआ। मैं अपनी एक रेडियो की तक़रीर में जो ''अस्हाबे हुसैन[अ०]'' के उनवान से दो साल पहले प्रकाशित हुई थी इस वाक़ेए को बयान कर चुका हूँ। इस वक़्त मुल्क के पिछले क़रीबी ज़माने के मशहूर अदीब मुन्शी प्रेमचन्द साहब की लफ़्ज़ों में सुनिये वह लिखते हैं:-

> *''जंग का मैदान सज गया है, हज़रत हुसैन[अ०] अपने जाँनिसार साथियों को जंग के मैदान से लौट जाने की तहरीक करते हैं। मुझे इसका फ़ख़्र है कि ख़ुदा-ए-तआला ने मुझे ऐसे सआदतमन्द अज़ीज़ और जाँनिसार दोस्त दिये आपने दोस्ती का हक़ पूरी तरह अदा कर दिया। आपने साबित कर दिया कि हक़ के सामने आप जान और माल की कोई हक़ीक़त नहीं समझते। इस्लाम की तारीख़ में आपका*

नाम हमेशा चमकता रहेगा। मेरा दिल इस ख़याल से टुक्ड़े-टुक्ड़े हो जाता है कि कल मेरी वजह से वह लोग जिन्हें ज़िन्दा रहना चाहिए शहीद हो जाएंगे। मुझे सच्ची ख़ुशी होगी अगर तुम लोग मेरे दिल का यह बोझ हल्का कर दोगे मैं बड़ी ख़ुशी से हर एक को इजाज़त देता हूँ कि उसे फैसला करने का पूरा इख़्तियार है। मेरा किसी पर कोई हक़ नहीं है। मैं तुमसे गुज़ारिश करता हूँ कि इसे क़ुबूल करो यह देखो मैं शमा बुझाए देता हूँ जिसमें किसी को शर्म न हो मगर— एक फ़र्द भी इस दोस्ताना चाहत से फ़ायदा नहीं उठाता।

बूढ़ा ज़ुहैरे क़ैन जैसा सहाबी कहता है अगर मुझे इसका यक़ीन हो जाए कि मैं आपकी हिमायत में ज़िन्दा जला दिया जाऊँगा और फिर ज़िन्दा होकर जलाया जाऊँगा और यह काम बहत्तर बार होता रहे तो भी मैं आपसे अलग नहीं हो सकता।

यह हक़ का जोश था जिसने कर्बला की जंग को रूहानी अहमियत दे रखी थी।"

यही इस रात की मोहलत लेने का बड़ा मक़सद था कि आप ख़तरे के यक़ीनी होने के बाद अपने साथियों को अपनी तबीअतों के तौल लेने का मौक़ा दे दें, कहीं ऐसा न हो कि कोई ऐसा शख़्स रह जाए जो ख़तरे के हंगामी होने की वजह से मजबूर होकर आपका साथ देने पर तैयार हुआ हो।

आप यह भी चाहते थे कि मुख़ालिफ़ जमाअत की फौज को भी इस एक रात का मौक़ा ग़ौर और फ़िक्र और हक़ और बातिल को पहचानने के लिए दे दें और हुसैन[अ०] की यह कोशिश बेकार नहीं गई बल्कि इसके ज़रिये से हुसैन[अ०] के उसूल को वह बड़ी जीत हासिल हुई जो दुनिया की तारीख़ में यादगार रहेगी।

आपको मालूम है कि जितनी वजहें दिल को बढ़ाने वाली होती हैं वह सब मुख़ालिफ़ फ़ौज में मौजूद थीं ज़्यादती, ताक़त, आराम, हुकूमत की मदद, कामियाबी का यक़ीन, तन्ख़्वाह का दबाव और इनाम की उम्मीदें भी, इसके बरअक्स जितनी वजहें हिम्मत तोड़ने वाली होती हैं वह हुसैन[अ०] की तरफ थीं। बेकसी और बेबसी, तादाद की कमी, सामान का ख़त्म होना, पानी की कमी और इसके बाद तबाही का यक़ीन, फ़िर भी आपने कभी नहीं सुना होगा और कोई ग़लत रिवायत भी ऐसी नहीं है जो बतलाती हो कि कोई एक शख़्स भी इधर का उधर गया हो। यानी ऐसा नहीं हुआ कि हज़रत इमाम हुसैन[अ०] की तरफ़ का कोई शख़्स टूटकर मुख़ालिफ़ की तरफ़ चला गया हो मगर उधर का कम से कम एक और वह भी मामूली सिपाही नहीं बल्कि एक हज़ार सवारों का अफ़सर हुर बिन यज़ीद रियाही उमरे साद की फ़ौज से अलग होकर हज़रत इमाम हुसैन[अ०] की तरफ़ आ गया। यह उसी एक रात की मोहलत का असर था इसमें हुर के दिल और दिमाग़ में जंग होती रही और आख़िर हक़ ने फ़तह पाई और बातिल की हार हुई। यह हुसैनी उसूल की वह बेपनाह जीत थी जो हुसैन[अ०] की ज़िन्दगी में इब्ने ज़ियाद और उसकी सारी फ़ौज को नज़र आई और यह उसी एक रात की मोहलत का नतीजा थी। ■■■

शबे शहादत

यह तक़रीर ऑल इण्डिया रेडियो स्टेशन लखनऊ से दस मुहर्रम 1371[हि०] में प्रसारित हुई।

एक कहावत बहुत ज़बानों पर चढ़ी हुई है कि "कभी के दिन बड़े और कभी की रातें" इसका मतलब चाहे कुछ भी हो मगर यह बिल्कुल सही बात है कि कर्बला की दसवीं मुहर्रम का तारीख़ में जिस तरह दिन बहुत बड़ा है उसी तरह रात भी।

यूँ तो "रात" की लफ़्ज़ के साथ ही दिन के मुक़ाबले में कुछ न कुछ अन्धेरे का ख़याल होता ही है मगर 61[हि०] की दसवीं मुहर्रम की रात की हक़ीक़त यह है कि हर तरफ अन्धेरा ही अन्धेरा नज़र आता है।

इसे अन्धेरा कहिये या इन्सानियत के संसार में अन्धेर कि पैग़म्बरे इस्लाम[स॰] का कलेमा पढ़ने वाले और मुसलमान होने के दावेदार खुद पैग़म्बरे इस्लाम[स॰] के घर को बर्बाद करने की तैयारियाँ कर रहे थे और रसूले ख़ुदा[स॰] के उस नवासे को जिसे आप जान व रूह से ज़्यादा अज़ीज़ रखते हों तलवारों, तीरों और नेज़ों का निशाना बनाने को बिल्कुल तुले हुए थे। आज मदीने में अन्धेरा था इसलिए कि रसूले ख़ुदा[स॰] के ख़ानदान का आख़री चिराग़ आपकी क़ब्र से अलग होकर आँधियों की ज़द पर था, मक्के में अन्धेरा था, इसलिए कि काबे के वारिस को ज़िन्दगी के आख़िरी हज करने का मौक़ा न मिल सका और वह हज के पूरा होने में एक दिन बाक़ी रहने की हालत में 9 ज़िलहिज्जह को हज का इरादा छोड़ कर अन्जाने सफ़र के लिए मजबूर हो गए थे, कूफ़े में अन्धेरा था, इसलिए कि वह कूफ़ा जो अली[अ॰] की राजधानी रह चुका था आज अली के बेटे के क़त्ल के लिए छावनी बना हुआ था और कूफ़े की क़ाबिले जंग आबादी पूरी कर्बला की तरफ़ उंडेल दी गई थी जिसकी वजह से एक हुसैन[अ॰] और उनके बहत्तर साथियों के मुक़ाबले के लिए कम से कम तीस हज़ार की फ़ौज इकटठा हो गई थी। शाम के अन्धेरे को तो पूछिये ही नहीं कि रसूले ख़ुदा[स॰] के तख़्ते ख़िलाफ़त पर आज उनके बुज़ुरगों दुश्मनों में से एक दुश्मन का क़ब्ज़ा था जो खुलेआम शराब पीता, नमाज़ छोड़ता और जिन्सी ताल्लुक़ात में महरम और ना महरम का फ़र्क़ भी नहीं रखता था। यही तो वह नाक़ाबिले बर्दाश्त सूरतेहाल थी जिसके मुक़ाबले में रसूल[स॰] की शरीअत की हिफ़ाज़त करने वाले हुसैन[अ॰] ने अपनी जान, माल, औलाद, ज़ाहिरी इज़्ज़त और हर क़ाबिले लेहाज़ चीज़ को क़ुबानी के लिए पेश कर दिया और यह तय कर लिया था कि सब कुछ जाए मगर मैं यज़ीद को अपने नाना पैग़म्बरे इस्लाम[स॰] का सही जानशीन क़बूल नहीं कर सकता।

कर्बला में हर तरफ़ अन्धेरा ही अन्धेरा था अगरचे दसवीं को चाँद निकलता है मगर अरब के गर्द व ग़ुबार से भरे रेगिस्तान का चाँद भी अन्धेरे की एक नक़ाब अपने चेहरे पर डाल कर निकलता है। जब चाँद का यह आलम हो तो तारों का पूछना ही क्या। शाम की फ़ौज के दिलो दिमाग़ पर अन्धेरा छाया हुआ था इसलिए कि वह जान बूझ कर पैग़म्बरे ख़ुदा[स॰] के बेगुनाह फ़रज़न्द को क़त्ल करने जा रहे थे और हुसैनी जमाअत में माँओं, बहनों और बेटियों की आँखों में दुनिया अन्धेरी थी कि उनके बेटे, बाप और भाई बस एक इशारे के मेहमान थे। बच्चों की आँखों के सामने प्यास की शिद्दत से धुआँ छाया हुआ था और रात के सन्नाटे में नहरे फ़ुरात के बहने की आवाज़, जो ऐसा महसूस होता था कि बहुत क़रीब से आ रही है उनकी प्यास और बढ़ा रही थी हालांकि वह बहुत क़रीब होने के बाद भी उनसे बहुत दूर थी क्योंकि आज पूरे दो दिन हो चुके थे कि नहर पर फ़ौजों का पहरा लग गया था कि हुसैन[अ॰] और उनके छोटे-छोटे बच्चों तक पानी का एक क़तरा भी न पहुँच सके।

इन सभी अन्धेरों में बस अगर कोई चीज़ बड़ी रौशन और चमकने वाली थी तो वह शहीदों का मुस्तक़बिल और हुसैन[अ॰] का चेहरा जो इस तमाम ज़ाहिरी ग़म व हसरत व अफ़सोस की भीड़ में भी मुतमइन नज़र आ रहा था बल्कि जिसकी ख़ास सिफ़त यह थी कि जितना वक़्त सख़्त होता जाता था उतना हुसैन[अ॰] का चेहरा और चमकता जाता था।

यह ज़िन्दगी की रात हुसैन[अ॰] ने माँग कर बड़ी मुश्किल से हासिल की थी क्योंकि नवीं तारीख़ दोपहर बाद को सुलह की बातचीत का ख़ात्मा हो गया था इब्ने ज़ियाद कूफ़े के हाकिम के उस ख़त से जो कर्बला की दुश्मन फ़ौज के कमाण्डर इब्ने साद के पास आया था कि हुसैन[अ॰] से बिल्कुल सुलह की बातचीत न की जाए बल्कि उन्हें मजबूर किया जाए कि या यज़ीद की बैअत करें या लड़ना क़बूल करें। हुसैन[अ॰] के नफ़्स की गहराई, ज़मीर के इस्तेह्काम और अमल की मज़बूती को इब्ने साद ख़ूब जानता था। इस लिए ख़त को देखते ही उसने कह दिया कि ''ख़ुदा की क़सम हुसैन[अ॰] बैअत तो नहीं करेंगे। यक़ीनन उनके बाप का दिल उनके सीने के अन्दर है।'' इससे यह भी ज़ाहिर है कि यज़ीद की बैअत ख़ुद यज़ीदी फ़ौज के कमाण्डर की निगाह में भी ऐसी नाक़ाबिले

बर्दाश्त चीज़ थी जिसे हुसैन[अ०] को कभी पसन्द नहीं करना चाहिए। अब यह उसके ज़मीर की कमज़ोरी थी कि हुसैन[अ०] को बेगुनाह समझने के बावजूद इनाम और हुकूमत की लालच में फ़िर भी हुसैन[अ०] से जंग करने के लिए तैयार हो गया।

उसने फ़ौरन हुक्म दे दिया जिस पर दुश्मन की फ़ौज ने हुसैनी जमाअत पर यलग़ार कर दी। हज़रत इमाम हुसैन[अ०] ने अपने भाई अबुलफ़ज़लिल अब्बास को भेज कर मालूम किया कि इस अचानक हमले की क्या वजह है बताया गया कि अमीर इब्ने ज़ियाद का हुक्म आया है कि या हुसैन[अ०] बैअत करें या क़तई तौर पर जंग की जाए। यह मालूम होने के बाद हज़रत इमाम हुसैन[अ०] ने एक रात की मोहलत माँगी।

यह मोहलत इसलिए न थी कि यज़ीद की बैअत के मसले पर ग़ौर किया जाए क्योंकि यह तो पहले ही से तय बात थी कि यज़ीद की बैअत मुमकिन नहीं बल्कि इस रात की मोहलत लेने से आख़िरी बार अल्लाह की इबादत के अदा करने के अलावा यह मक़सद था कि साथियों को इसका मौक़ा दे दें कि जिसका दिल चाहे आपके साथ रहे और जिसका दिल चाहे वह चला जाए।

दुनिया की तारीख़ में इमाम हुसैन[अ०] के इस किरदार का जवाब मिलना बहुत मुश्किल है। आम तौर पर सख़्त और नागवार माहौल में इन्सान अपने साथियों की तादाद बढ़ाने की कोशिश करता है ख़ासकर एक मज़हबी रहनुमा की हैसियत से बहुत आसान था कि इमाम[अ०] निहायत हौलनाक और असरदार अलफ़ाज़ में आख़ेरत के अज़ाब से डराकर अपनी जमाअत को अपने साथ रहने पर तैयार करते जो बेशक सही भी होता मगर यहाँ यह सूरत इख़्तियार नहीं की गई।

हज़रत इमाम हुसैन[अ०] ने इस रात अपने साथियों को ख़ास तौर पर इकटठा करके जो ख़ुतबा पढ़ा वह तारीख की सभी किताबों में बिलकुल तक़रीबन एक जैसा है। उसमें बग़ैर ख़तीबाना जोशो ख़रोश के बिल्कुल सादा अलफ़ाज़ में यह कहा गया था कि देखो! कल हमारा और इस जमाअत का फ़ैसला करने वाला दिन है, उन्हें मुझसे मतलब है और मेरे सिवा किसी से उन्हें सरोकार नहीं है इसलिए तुम लोग मेरे साथ इस ख़तरे में क्यों पड़े हो, यह रात का पर्दा पड़ा हुआ है, रास्ते खुले हुए हैं, इस पर्द-ए-शब में मुझ से रुख़सत होकर चले जाओ।

आपने मज़हबी पाबन्दियों को सामने रखते हुए यह भी फ़रमा दिया कि मैं अपनी बैअत की ज़िम्मेदारी तुम पर से हटाए लेता हूँ। इसका मतलब यह है कि आपने उन्हें आख़िरत के बारे में इत्मिनान दिलाया कि अगर मेरी इजाज़त से फ़ायदा उठाकर तुम जाना चाहो तो तुम्हें आख़िरत की सज़ा का भी डर न करना चाहिए।

आम तौर से मज़हबी लोगों पर यह इल्ज़ाम लगाया जाता है कि वह इबादतों और आमाल में जन्नत और जन्नत की हूरों के वादे और जहन्नम के ख़ौफ़ का लेहाज़ करके किरदार की बेलौसी को बाक़ी नहीं रखते और उसमें नफ़्सानी चाहतों की शिरकत हो जाती है। हुसैन[अ०] कर्बला के जेहाद में अपने साथियों में से हर एक के अमल को इस बुलन्दी के मेयार पर देखना चाहते थे जहाँ सिवाए सच्चाई, सिवाए लिल्लाहियत और सिवाए इन्सानियत के फ़र्ज़ के एहसास के कोई भी जज़्बा या दबाव उन पर असर न डाल रहा हो।

इमाम हुसैन[अ०] ने उन्हें जाने की खुली हुई इजाज़त दे दी मगर मजमे में से एक फ़र्द ने भी इस ज़िन्दगी को जो उन्हें ''बिन माँगे'' मिल रही थी क़बूल नहीं किया बल्कि अपनी ज़िन्दगियाँ हुसैन[अ०] के क़दमों पर डाल दीं। उन्होंने जो जवाब दिये उनमें से हर लफ़्ज़ आसमानों और ज़मीनों से ज़्यादा वज़नी हो गई इसलिए कि उसमें ख़ालिस ज़मीर की आज़ादी, राय की आज़ादी और इरादे की आज़ादी का जौहर काम कर रहा है। किसी ने कहा कि ऐ फ़रज़न्दे रसूल[स०] आपके बाद ज़िन्दगी ख़ुद एक अज़ाब है। किसी ने कहा अभी मेरे हाथ में तलवार और नेज़ा मौजूद है अगर यह हथियार न भी रहें तब भी आपका साथ न छोड़ूँगा। किसी ने कहा अगर क़त्ल किया जाऊँ, मुझे जला दिया जाए, मेरी ख़ाक हवा में उड़ा दी जाए और ज़िन्दा किये जाने के बाद फिर ऐसा हो और यह सत्तर बार हो तब भी यही तमन्ना रहेगी कि फिर जान इन्हीं क़दमों पर निसार हो।

बक़िया........... पेज 13 पर

कितने अफसोस का मक़ाम है कि वह कुरआन जो हमारी ज़िन्दगी का दस्तूरुलअमल है, जिसमें कामयाब ज़िन्दगी गुज़ारने के क़ानून बताये गये हैं वह मौत के वक़्त सिर्फ़ मरीज़ को हवा देने के काम में लाया जाता है। या अगर तिलावत की भी जाती है तो सिर्फ इस ग़रज़ से कि सवाब हासिल हो जाये............शायद इसीलिए शायरे रौशन फ़िक्र मुफ़क्किरे इस्लाम अल्लामा इक़बाल (ख़ुदा उनके दरजात बलन्द फरमाये) ने कहा था कि -

"जिसका अमल है बे ग़रज़ उसकी जज़ा कुछ और है।"

और अल्लामा "नज्म" आफ़न्दी[ताबा सराह] ने फरमाया कि -

होशियार तो लेते नहीं कुरआँ से सबक़
बे होश को कुरआँ की हवा देते हैं!

हालाँकि इसी हिन्दुस्तान में भी ऐसे भी कुरआने हकीम पढ़ने वाले मौजूद हैं जो कुर्आन की तिलावत करके उससे अहकामें दीन और अहकामे ज़िन्दगी हासिल करते हैं और उस पर अमल भी करते हैं यक़ीनन ऐसे लोग लायक़े मुबारकबाद हैं लेकिन उनकी ताअदाद बहुत कम है क्योंकि आज इस ज़लील और हक़ीर दुनिया (जो यक़ीनन ख़त्म हो जाने वाली है) में खोये हुए नाम निहाद मुसलमान अपनी कामयाबी का मेयार अपनी ग़लत सोच की वजह से दुनिया के हासिल करने को समझते हैं। और क़ुर्आन को समझना और उस पर अमल करना वक़्त बरबादी तसव्वुर करते हैं।

लेकिन लिल्लाह होशियार———

ये क़ुर्आन रसूले करीम[स०] की अमानत है और उनके जानशीनों ने अपने-अपने दौर में इसकी हिफ़ाज़त करके आज तक महफ़ूज़ रखा है और बिहम्दिल्लाह आज भी क़ुर्आन का एक मुहाफ़िज़ परदे के पीछे मौजूद है कहीं ऐसा न हो कि मिस्ले यज़ीद कोई क़ुर्आन मजीद पर ईमान रखने का ज़बानी दावा कर रहा हो लेकिन इस ज़बानी दावे के बावजूद अपने आमाल और किरदार से कुरआने मजीद की तकज़ीब कर रहा हो (झुठला रहा हो) और फिर वक़्त का हुसैन[अ०] अपने जद शहीदे कर्बला की तरह अस्रे हाज़िर के यज़ीदों पर तलवार चला दे............

लेहाज़ः क़ुर्आने हकीम के फ़रमान में गौरो फ़िक्र करके सही नतीजा निकालिए और उस पर उस तरह अमल कीजिए जिस तरह माअसूमीन अलैहिमुस्सलाम ने अमल करके बताया है या जिस तरह असहाबे आइम्मः ने अमल किया है इसी में दुनिया और आख़ेरत की कामयाबी है वरना ईमान और इस्लाम का ज़बानी दावा खोखला साबित होगा।

"सलाम हो उस पर जो हिदायत की पैरवी करे"

बक़िया............ शबे शहादत

राहत और इत्मिनान के मौक़े पर रईसों के दरबार में ख़ुशामदी लोग हद से आगे निकल जाते हैं मगर मुसीबत और बला में ख़तरे के सर पर होने की हालत में एक ग़रीबुल वतन मुसाफ़िर (परदेसी) के सामने जब इस तरह की बातें कही जा रही हों तो उनमें सिवाए सच्चाई और मुहब्बत के हो ही क्या सकता है? और अगर इस वक़्त किसी अन्जाने शख़्स को इन अलफ़ाज़ की सच्चाई में शक महसूस हो तो कुछ ज़्यादा इन्तिज़ार की ज़रूरत न होगी।

इसी रात के गुज़रने के बाद जो दिन आएगा वह कर्बला के तख़्त-ए-ख़ाकी पर बहते हुए ख़ून की तहरीर से इन अलफ़ाज़ के अमल में आने की तारीख़ तैयार करेगा और फिर कुछ घण्टों के बाद इन्हीं बातें करने वालों के कटे हुए सर नेज़ों पर बुलन्द होंगे और उस वक़्त अगरचे उनकी ज़बानें ख़ामोश दिखाई देती हों मगर दिल से सुनने वालों को उनका यह एलान सुनाई देगा कि देखो! जो हमने कहा था वह कर दिखाया। अगर ज़िन्दगी में हुसैन[अ०] के क़दमों पर रहे तो लाशे हमारे ख़ाक के अन्दर हुसैन[अ०] की लाश के क़दमों के पास और सर हमारे नेज़ों पर हुसैन[अ०] के सर के पीछे ही पीछे हैं और इसी की क़दरदानी थी जो हुसैन[अ०] के आख़िरी वारिस इमामे अस्र[अ०] ने उनको मुख़ातब करके आवाज़ दीः-

"मेरे माँ-बाप तुम पर फ़िदा, ऐ मुजाहिदीने कर्बला! तुम भी पाक हुए और वह ज़मीन भी पाक हो गई जिसमें तुम दफ़्न हुए और ख़ुदा की क़सम तुम ने एक बड़ी कामयाबी हासिल की, "काश मैं भी तुम्हारे साथ होता और इस बड़ी कामयाबी में शरीक होता"

हमारे दिल में भी हक़ की मदद का यही जोश होना चाहिए। आइये हम आप मिलकर कहें

"काश— हम सब भी आपके साथ होते और इस बड़ी कामयाबी में शरीक होते"

